Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 SHISRRJ | Volume 2 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

संस्कृत साहित्य शास्त्र में रीतितत्व

आलोक कुमार त्रिपाठी
शोध छात्र,
वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय,
जौनपुर

शोध आलेख सार – आधुनिक आचार्यों ने रीतितत्त्व के सन्दर्भ में स्वकीय मतों को उपस्थापित किया है। ध्वनिवादियों ने रीति, मार्ग, वृत्ति तथा प्रवृत्ति को पर्यायभूत स्वीकार करते हुये इसे वृत्ति रूप में परिवर्तित कर दिया। काव्यशास्त्र के आरम्भिक चरण में रीतितत्व को अलग सम्प्रदाय के रूप में व्याख्यात किया गया था। आचार्य वामान ने रीति को गुणों से सम्बद्ध किया तथा कुन्तक ने इसे कवि–व्यापार के रूप में अङ्गीकृत किया। आधुनिक आचार्यों में प्रो० राधावल्लभ त्रिपाठी रीति के सन्दर्भ में नवीन एवं मौलिक प्रतिपादन करते है, वे चार नई रीतियों का उल्लेख नवीन ढंग से करते है। रीतियों के सम्बन्ध में प्रो० त्रिपाठी का विवेचन प्रशंसायोग्य है।

मुख्य शब्द – संस्कृत, साहित्य, शास्त्र, रीतितत्व, आधुनिक आचार्य, आचार्य वामान।

साहित्यशास्त्र में वृत्ति एवं रीति को शरीर रूप स्वीकार किया जाता है। प्राचीन आचार्यों में वामन ने 'रीतिरात्मा काव्यस्य' कहकर रीति को काव्य की आत्मा के रूप में स्वीकार किया है।

वस्तुतः 'रीङ्गतौ' धातु से क्तिन् प्रत्यय करने पर रीति शब्द बनता है जिसका अर्थ है– गति अथवा मार्ग। रीति की अवधारणा अत्यन्त प्राचीन है। ऋग्वेद के अनेक मंत्रों में रीति शब्द का उल्लेख मिलता है–

महावरीतिः शवसा सरत् पृथक्।[1]

वाते वात्युर्या नद्येव रीतिः।।[2]

आचार्य राजशेखर काव्यपुरूष की संकल्पना करते हुये वृति एवं रीति को शरीर के संघटक तत्त्व के रूप में प्रतिपादित करते है। रीति के सन्दर्भ में राजशेखर का कथन है–

रीतिनिर्णयं सुवर्णनाभ इति।[3]

सुवर्णानाभ नामक आचार्य रीतिविषयक ग्रन्थ के प्रथम रचनाकार है। आचार्य शारदातनय प्राचीन आचार्यों की 105 रीतियों से परिचित थे। प्राचीन आचार्यों में से भामह तथा दण्डी ने रीति के लिये मार्ग शब्द का प्रयोग किया है। आचार्य दण्डी अनन्त मार्गों का उल्लेख करते है–

अस्त्यनेको गिरां मार्गः सूक्ष्मभेदः परस्परम्।

तत्र वैदर्भगौडीयौ वर्ण्येते प्रस्फुटान्तरौ।।[4]

परन्तु प्रमुख रूप से दो मार्गो का उल्लेख करते है–

इति मार्गद्वयं भिन्नं तत्स्वरूपनिरूपणात्।
तद्भेदास्तु न शक्यन्ते वक्तुं प्रतिकविस्थिताः।।[5]

आचार्य वामन ने रीति को काव्य की आत्मा के रूप में व्याख्यात किया है। वे कहते है–

विशिष्टा पदरचना रीतिः। विशेषो गुणात्मा।[6]

अर्थात् विशिष्ट पद रचना रीति है और पदरचना का वैशिष्ट्य उनकी गुणात्मकता है। वह रीति तीन प्रकार की होती है– वैदर्भी, गौड़ी और पा´चाली। कुन्तक एवं रुद्रट रीतियों के सन्दर्भ में व्यापक दृष्टिकोण रखते है। वे 4 प्रकार की रीतियों को स्वीकार करते है– वैदर्भी, पा´चाली, लाटी तथा गौड़ी। आचार्य भोज 6 प्रकार की रीतियों को स्वीकार करते है– वैदर्भी, पा´चाली, लाटी, गौड़ी आवन्ती एवं प्राच्या। आचार्य आनन्दवर्धन तो वृत्ति को रीति से पृथक् स्वीकार नही करते। वे कहते है– 'तदनतिरिक्तवृत्तयों वृत्तयः।' यहाँ तत् पद रीति के लिए आया है। आचार्य अभिनवगुप्त तथा मम्मट रीति एवं वृत्ति को अलग–अलग स्वीकार नही करते है। पण्डितराज जगन्नाथ ने भी मम्मट की तरह वृत्ति एवं रीति में अभेद सम्बन्ध को माना है।

प्राचीन आचार्यों की भाँति आधुनिक आचार्यो ने भी रीतितत्व के विवेचन में स्वकीय मतों का उपस्थापन किया है। इन आचार्यों के मतों को यहाँ रखा जा रहा है– आचार्य छज्जूरामशास्त्री ने परम्परा के प्रति श्रद्धाभाव रखते हुये रीतितत्व का विवेचन किया है–

रीतियश्च गुणाः प्रोक्ताः काव्यशोभाकरा यतः
ततस्तासां च तेषां च क्रियतेऽद्य निरूपणम्।[7]

डा० हरिश्चन्द्र दीक्षित ने वामन के अनुसार रीतियों की संख्या तीन ही स्वीकार की है– वैदर्भी, गौड़ी, पा´चाली, डा० शंकरदेव अवतरे ने भी परम्परा का अनुसरण करते हुये रीति के सन्दर्भ में अपनी विचारशीलता स्पष्ट की है। प्रो० राधावल्लभ त्रिपाठी स्वकीय ग्रन्थ 'अभिनवकाव्यालङ्कारसूत्र' में कवि–व्यापार निरूपण प्रसंग में रीतियों का विवेचन करते हुये वैदर्भी आदि के अतिरिक्त 4 प्रकार की नई रीतियाँ स्वीकार करते है– व्यासरीति, विडम्बन रीति, चेतनाप्रवाह–रीति तथा वार्तालापरीति।

नूतन उन्मेष की दृष्टि से प्रो० त्रिपाठी द्वारा प्रस्तावित ये रीतियाँ अवश्य ही अभिनन्दनीय है परन्तु इन रीतियों का प्राचीन रीतियों से सैद्धान्तिक पार्थक्य, स्पष्टतः दृष्टिगोचर होता है। प्राचीन आचार्यो की रीतियाँ मात्र पद–संघटना में सीमित है उनके वैशिष्ट्य के रूप में, परन्तु राधावल्लभ त्रिपाठी व्याख्यात रीति पद संघटना का नहीं, अपितु कथ्य तथ्य का वैशिष्ट्य प्रकट करती है। अतः वे अर्थ–प्रकाशनमात्र की शैलियाँ प्रतीत होती हैं।

प्रो० राजेन्द्र मिश्र ने रीतितत्व का विवेचन परम्परानुसार ही प्रस्तुत किया है। आचार्य वामन्, आनन्दवर्धन एवं अभिनवगुप्त के मत को संगृहीत करते हुये उनका मन्तव्य है–

रीतिं नैव गुणाद्भिन्नां वृत्तिं नाऽलंकृतेरपि।
मन्यते ध्वनिकारोऽसौ लोचनकृत्समर्थितः।।
एवं स्थितेऽपि पूर्वेषां मन्तव्यपरिशीलनम्।

वृत्तिरीतीतिहासार्थं युक्तियुक्तं प्रतीयते।।
स्थाने–स्थाने यथा काये विलसन्त्यस्थितसन्धयः।
संघटनाः पदानां तास्तद्वत्काव्येऽपि संस्थिताः।।
पदानां रचना कपि विशिष्टा यावलोक्यते।
काव्यात्यपदवीं रूढ़ा सा रीतिरिति वामनः।।
गुणानुप्राणिता रीतिरङ्गीभूता कलेवरे।

साक्षाद्रसोपकर्त्रीयं गुणैरेव न संशयः।।[8]

प्रो० मिश्र ने प्राचीन आचार्यो के मन्तव्यों के साथ पूर्ण सहमति व्यक्त की है वे रीति को गुण से भिन्न स्वीकार नहीं करते है।

इस प्रकार आधुनिक आचार्यों ने रीतितत्त्व के सन्दर्भ में स्वकीय मतों को उपस्थापित किया है। ध्वनिवादियों ने रीति, मार्ग, वृत्ति तथा प्रवृत्ति को पर्यायभूत स्वीकार करते हुये इसे वृत्ति रूप में परिवर्तित कर दिया। काव्यशास्त्र के आरम्भिक चरण में रीतितत्व को अलग सम्प्रदाय के रूप में व्याख्यात किया गया था। आचार्य वामान ने रीति को गुणों से सम्बद्ध किया तथा कुन्तक ने इसे कवि–व्यापार के रूप में अङ्गीकृत किया। आधुनिक आचार्यों में प्रो० राधावल्लभ त्रिपाठी रीति के सन्दर्भ में नवीन एवं मौलिक प्रतिपादन करते है, वे चार नई रीतियों का उल्लेख नवीन ढंग से करते है। रीतियों के सम्बन्ध में प्रो० त्रिपाठी का विवेचन प्रशंसायोग्य है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. ऋग्वैद–2/27/24
2. ऋग्वैद–2/39/5
3. अभिराजयशोभूषण–पृ०सं० 93
4. काव्यादर्श–1/40
5. काव्यादर्श–1/101
6. काव्यालंकारसूत्रवृत्ति–2/7–8
7. साहित्यबिन्दु–4/1
8. अभिराजयशोभूषण–2/70–74